एक व्यक्ति को सिर्फ 36 ग्राम दाल!

डॉ. वाई.पी. गुप्ता

भारतीयों के भोजन में दालों का महत्वपूर्ण स्थान है। देश में दालों की पर्याप्त किस्में उपलब्ध हैं और लोग इन्हें बड़े चाव से खाते हैं। इनमें चने की दाल, अरहर, मूंग, उड़द, मसूर, लोबिया तथा मोठ आदि प्रमुख हैं। समाज के एक बड़े वर्ग की खुराक में प्रोटीन की पूर्ति ये दालें ही करती हैं।

हमारा देश अभी तक दालों में आत्मनिर्भर नहीं बन पाया है। वर्ष 1998-1999 में इनका उत्पादन 148 लाख टन था जो 1999-2000 में घटकर 131 लाख टन रह गया। हमारी बढ़ती आबादी के लिए वर्तमान उत्पादन आवश्यकता से काफी कम है। इसलिए हमारे देश को अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए करोड़ों रुपए की विदेशी मुद्रा खर्च करके दालों का आयात करना पड़ता है। 1999-2000 में 7700 टन दाल आयात की गई थी।

भारत में दालों की प्रति व्यक्ति उपलब्धता धीरे-धीरे कम हो गई है। विश्व स्वास्थ्य संगठन/कृषि एवं खाद्य संगठन द्वारा निर्धारित 80 ग्राम के सामान्य स्तर की तुलना में यह वर्ष 1956 में 70 ग्राम से कम होकर अब 36 ग्राम ही रह गई है। राष्ट्रीय कृषि आयोग का मानना है कि प्रोटीन की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु हमारे देश को वर्ष 2000 तक दालों का उत्पादन 247 लाख टन तक करने की योजना बनानी चाहिए।

भारत विश्व में दालों का सबसे बड़ा उत्पादक व आयातक देश है। इसके बाद चीन का नम्बर आता है। विश्व के दाल उत्पादन में भारत का योगदान 24 प्रतिशत है। लेकिन पिछले तीन दशकों से यहां का दाल उत्पादन एवं क्षेत्र (जो क्रमशः लगभग 120-150 लाख टन और 220-230 लाख हैक्टर है) स्थिर रहा है। देश के कुल खाद्य उत्पादन में दालों का योगदान कम होता गया है; वर्ष 1950-51 में यह 16.6 प्रतिशत, 1970-71 में 10.9 प्रतिशत, 1990-91 में 8 प्रतिशत और 1999-2000 में यह घटकर 7.0 प्रतिशत ही रह गया।

उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान, महाराष्ट्र एवं बिहार दाल उगाने वाले मुख्य राज्य हैं। चना और अरहर दो मुख्य दालें हैं। दालों के कुल उत्पादन में इनका प्रतिशत 63 है। भारत में दालों का प्रति हैक्टर उत्पादन 600 कि.ग्रा. है जबकि विश्व में यह औसतन 729 कि.ग्रा. है। यू.एस.ए., चीन, युरोप और ईरान में यह क्रमशः 1612, 1137, 1065 और 1033 कि.ग्रा. हैक्टर है।

भारत में दालों का उत्पादन कम होने के कई कारण हैं। एक तो यह कि दालों के उत्पादन का क्षेत्र स्थिर रहा है। दूसरे, दालों में अधिक पैदावार देने वाले बीज नहीं मिल पा रहे हैं। इनमें से बहुत से बीज कीटों, बीमारियों तथा मौसम के परिवर्तनों को झेल नहीं पाते हैं। रासायनिक उर्वरक व कीटनाशकों का उपयोग कम है। ये दालें अधिकांशतः वर्षापोषित खेती के रूप में उगाई जाती है और सिंचाई की सुविधाएं अपर्याप्त हैं। चने का बमुश्किल 15 प्रतिशत क्षेत्र सिंचित है। इसके अतिरिक्त दालों का क्षेत्र बढ़ाने हेतु कोई प्रोत्साहन नहीं है क्योंकि दालों की तुलना में गेहूं और चावल के उत्पादन का खरीद मूल्य अधिक है। दालों का छिलका उतारने और उन्हें दलने के परम्परागत तरीकों से भी दाल की मात्रा कम हो जाती है।

दालों के सुरक्षित भंडारण की अपर्याप्त सुविधाओं ने भी दालों को क्षति पहुंचाई है। कीटों और चूहों के प्रभाव तथा पैदावार के बाद के रख-रखाव एवं भंडारण के दौरान फफूंद लग जाने से भी इनकी गुणवत्ता और मात्रा में कमी आ जाती है। इनके सूखने व भंडारण में पक्षी एवं चूहे काफी हानि पहुंचाते हैं। दालों की *ब्रकस चाइनेंसिस* नामक भृंग के कारण दालें खाने योग्य नहीं रह जाती हैं। ऐसा इसलिएं क्योंकि उनके मल में यूरिक अम्ल जैसे उपापचयी पनप जाते हैं और वसा अम्लता बढ़ जाती है जिससे वे दूषित